Indian J. Soc & Pol. 03(02): 2016: 67-72 **ISSN 2348-0084 (P)**
ISSN 2455-2127 (O)

महिला मानवाधिकार एवं हिन्दू विवाहित महिलाएँ : एक अध्ययन

संगीता विजय[1], अनीता रानी राजावत[2]
[1]एसोसिएट प्रोफेसर,राजनीति विज्ञान, वनस्थली विद्यापीठ टोंक, राजस्थान, भारत,
[2]शोध छात्रा (राजनीति विज्ञान) वनस्थली विद्यापीठ, टोंक, राजस्थान, भारत

ABSTRACT

महिला मानवाधिकार आज के समय में एक व्यापक अवधारणा है, जो वैधानिक अथवा कानूनी परिकल्पना ही नहीं वरन् वैचारिक विमर्श, समस्या एवं चुनौती भी है। यह अध्ययन अनुसंधान के रूप में व्यक्तिगत, सामुदायिक, राष्ट्रीय तथा अतर्राष्ट्रीय सभी स्तरों पर निरपेक्ष रूप से विद्यमान है। लोकतंत्र, मानवीय गरिमा, सार्वजनिक कल्याण एवं न्याय, समावेशी विकास आदि 'मानवाधिकर की स्थिति' को केन्द्र में रखे बिना अर्थहीन एवं अप्रासंगिक है। प्रस्तुत पत्र में हिन्दू विवाहित महिलाओं के मानवाधिकारों का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। जिसे अंर्तराष्ट्रीय स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक देखने का प्रयास किया गया है।

KEYWORDS: *हिन्दू, विवाह संस्कार, मानवाधिकार, महिला मानवाधिकार*

भारतीय समाज धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्र एवं भूगोल के आधार पर बहुल प्रकृति का है, जिसमें हिन्दूओं की प्रधानता है। विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक भारत में हिन्दू धर्म प्राचीनतम रहा है। 'हिन्दू' शब्द का प्रयोग आरंभ में प्रादेशिकता के रूप में होता था। एक प्रदेश भारत वर्ष के रहने वाले सब व्यक्ति 'हिन्दू' कहलाते थे। उस समय हिन्दू शब्द राष्ट्रीयता का भी प्रतीक था। हिन्दू शब्द का प्रचलन ग्रीकों के आगमन के साथ हुआ। ग्रीक लोक सिंध (इन्डस) नदी की घाटी में रहने वाले व्यक्तियों को इन्डोई कहते थे। धीरे–धीरे इस शब्द का प्रयोग सिन्धू घाटी से परे रहने वाले लोगों के लिए भी होने लगा और मुसलमान राज्य में हिन्दू शब्द का प्रयोग एक मत के अनुयायियों के लिए होने लगा जो हिन्दू धर्म को मानते थे, हिन्दू कहलाने लगे। अंग्रेजों ने भी हिन्दू शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया। वस्तुतः हिन्दू विधि में हिन्दू शब्द से तात्पर्य उन व्यक्तियों से है, जो आदित भारतीय है अथवा ऐसे धर्म या मत के अनुयायी है, जिसकी उत्पत्ति भारत की है। नकारात्मक रूप में हिन्दू वे व्यक्ति जो पारसी, यहूदी या मुसलमान नहीं है, वे हिन्दू है।(दूबे और द्विवेदी, 2012,पृ45.46)

हिन्दू धर्म एक प्रचीनतम धर्म है। हिन्दू धर्म में विवाह जन्मजन्मान्तर तक चलने वाला एक पवित्र धार्मिक संस्कार है। वस्तुतः विवाह से व्यक्ति स्वछन्द न रहकर नियमों का परिचालन करते हुए अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करता है। विवाह द्वारा महिला–पुरूष सम्बन्ध नियमित एवं सुव्यवस्थित होते है। यह पति–पत्नी के बीच एक समझौता मात्र नहीं है, वरन् अभ्युदय और निःश्रेय प्राप्ति का महत्वपूर्ण माध्यम है। महिला पुरूष के व्यक्तित्व के विकास, वंश परम्परा का नैरतर्न्य तथा कुटुम्ब का संयोजन विवाह द्वारा ही संभव है। विवाह महिला पुरूष के जीवन की पूर्णता का महत्वपूर्ण साधन है।

व्यक्ति की ब्रह्मचर्या श्रम के पश्चात विवाह संस्कार द्वारा ही गृहस्थाश्रम में प्रविष्टि होती है। 'विवाह' शब्द वि+वह+घञ से बना है। वह धातु का अर्थ है– ले जाना। यह उस कार्य का नाम है, जिसको सम्पादित करके कन्या को उसका वर उसके पितृगृह से ले जाता है। संस्कृत साहित्य में विवाह के लिए उद्ववाहू, परिणय, उपयम, पाणिग्रहण आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है। किन्तु विवाह अधिक व्यापक अर्थ वाला है, जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए पत्नी के सहयोग का बोधक है। इसमें भौतिक बोध एक पक्ष है, सर्वस्व नहीं। हिन्दूओं में विवाह एक अनिवार्य धार्मिक आवश्यकता एवं पवित्र कर्म है। इस प्रकार विवाह एक धार्मिक संस्कार है। संतान का पालन पोषण, आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति, सामाजिक दायित्वों का निर्वाह, सदाचार का अनुगमन एवं नैतिक मूल्यों, आदर्शो एवं प्रतिमानों की स्थापना का मूलाधार विवाह ही माना गया है। अतः प्रस्तुत शोध पत्र हिन्दू विवाहित महिलाओं के मानवाधिकारों के अध्ययन पर केन्द्रित किया गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला मानवाधिकार

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी संयुक्त राष्ट्र संघ ने समय–समय पर अनेक अभिसमय घोषणाएं, सम्मेलन, प्रोटोकोल पारित करके महिला मानवाधिकारों का संरक्षण एवं संवर्धन किया। इनमें – समान वेतन संबंधी अभिसमय 1953, दासता अभिसमय 1955, विवाहित महिलाओं की राष्ट्रीय संबंधी अभिसमय 1988, विवाह संबंधी स्वीकृति, विवाह की न्यूनतम आयु तथा विवाह के पंजीकरण संबंधी अभिसमय 1964, राजनीतिक एवं नागरिक

1: Corresponding Author

अधिकारों पर अभिसमय 1966, आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अभिसमय 1966, यातना, क्रूरता तथ अमानवीयता के विरूद्ध अभिसमय 1984, नागरिक, राजनीतिक अभिसमय का वैकल्पिक प्रोटोकोल 1966, महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव समाप्त करने संबंधी अभिसमय का वैकल्पिक प्रोटोकोल 1999, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों का वैकल्पिक प्रोटोकोल 2008, बालक के व्यवहार कार्यप्रणाली के अधिकारों पर वैकल्पिक प्रोटोकोल 2014 आदि है। इसके अलावा संयुक्त राष्ट्र द्वारा समय–समय पर बहुत सी घोषणाएँ की गई। जैसे– मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा 1948, महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव समाप्ति की घोषणा 1967, मानवाधिकारों से संधित तहरान घोषणा 1968, मानवाधिकार पर वियना घोषणा, 1993, महादूतों का अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन 1948, यू. एन. वुमन आदि।

राष्ट्रीय स्तर पर महिला मानवाधिकार

भारत में महिला मानवाधिकारों को संरक्षण एवं प्रोत्साहन संवैधानिक एवं वैधानिक स्तर पर किया गया है। साथ ही उनको वास्तविक रूप में स्थापित करने हेतु अनेकानेक संस्थागत एवं क्रियात्मक प्रयास किये जा रहे है।

भारत में महिलाओं के संवैधानिक अधिकार

26 जनवरी 1950 के प्रवृत्त भारतीय संविधान में समस्त भारतीयों को मूल अधिकार प्रदा किये गये। संविधान में ही नीति निर्देशक तत्वों द्वारा राज्य का यह कर्तव्य निश्चित किया गया कि समस्त भारतीयों के लिये एक ऐसी व्यवस्था सुनिश्चित करेंगे जिससे उनको समान रूप से जीवन सुरक्षा, संरक्षण, उन्नति, एवं संवर्धन के अवसर प्राप्त हो। हिन्दू महिलाओं को संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकार इस प्रकार है–

महिला– पुरुष समान अधिकार

वे प्रावधान जो महिला–पुरुष दोनों पर समान रूप से लागू होते है। (retrived from http://gpsingh.Jagranjunction.com) जैसे समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14–18), स्वतंत्रता का अधिकार(अनुच्छेद 19–22), शोषण के विरूद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23–24), धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार(अनुच्छेद 25–28), संस्कृति एवं शिक्षा का अधिकार (29–30), संवैधानिक उपचारों का अधिकार (अनुच्छेद 32), संविधान के धारा 4 में वर्णित नीति निर्देशक तत्व (अनुच्छेद 38–51) आदि।

महिलाओं के विशेष अधिकार

वे प्रावधान जो महिलाओं को विशेष संरक्षण एवं अधिकार प्रदान करते हैं। जैसे– अनुच्छेद 15, के द्वारा यह व्यवस्था की गई कि राज्य केवल धर्म, मूलवंश जाति, लिंग, जन्म स्थान के आधार पर नागरिकों में विभेद नहीं करेगा अर्थात् महिला–पुरुष को समान अधिकार प्रदान किये जायेगें। लेकिन साथ ही इस अनुच्छेद के द्वारा यह भी स्पष्ट किया गया कि सरकार के द्वारा महिलाओं व बच्चों को विशेष संरक्षण, सुविधाएँ प्रदान किये जाना संविधान के विपरीत नहीं माना जायेगा। इसी आधार पर महिला कर्मचारियों को प्रसूति लाभ, बच्चों की निशुल्क व अनिवार्य शिक्षा, महिला कर्मचारियों के कार्यालय समय के नियमन संबंधी प्रबन्धों को न्यायोचित ठहराया गया है। वस्तुतः महिलाओं और बच्चों के कल्याणार्थ बनाये गये विशेष हितकारी उपबंधों को इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती है कि ऐसी विधि अनुच्छेद 14 के उल्लंघन में अधिनियमित की गई है।

अनुच्छेद–21 अनुच्छेद द्वारा यह व्यवस्था की गई है कि किसी भी व्यक्ति को उसकी प्राण व दैहिक स्वतंत्रता से कानून की निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जायेगा अन्यथा नहीं। इस प्रकार यह अधिकार स्त्री पुरुष दोनों को विधायिका एवं कार्यपालिका के विरूद्ध समान संरक्षण प्रदान करता है। इसी अनुच्छेद के द्वारा महिलाओं के यौन शोषण प्रतिकार एवं पुनर्वास के लिये मार्गदर्शन सिद्धान्त के प्रतिपालन के अतिरिक्त बलात्कार से पीड़ित महिला को अंतरिम प्रति प्राप्त करने का अधिकार प्रदान किया गया है।

अनुच्छेद 23, 24 के द्वारा दुर्व्यवहार व व्यापार एवं इसी प्रकार के अन्य बलात् श्रम को प्रतिषेध करते हुये इस प्रकार के कृत्य को दण्डनीय घोषित किया गया है। राज बहादुर बनाम लगल रिमेम्ब्रान्सर विवाद में तो न्यायालय द्वारा स्पष्ट रूप से यह व्यक्त किया गया है कि इसमें महिलाओं और बच्चों का क्रय–विक्रय ही नही वरन् उनका अनैतिक व्यापर निषेध भी सम्मिलित है। वस्तुतः अनुच्छेद 23–24 दोनों में शोषण के विरूद्ध अधिकार मानव दुर्व्यवहार एवं बलात श्रम को निषेध किया गया है। इन अनुच्छेदों द्वारा भारतीय समाज में सदियों से चली आ रही महिला क्रय–विक्रय एवं बेगार प्रथाओं पर रोक लगाई गयी है।

भारतीय संविधान के भाग 4 में वर्णित कुछ नीति निर्देशक तत्वों के द्वारा भी महिलाओं को विशेष संरक्षण प्रदान किया गया है, जैसे अनुच्छेद 39 (ङ) के अन्तर्गत राज्य से यह अपेक्षा की गई है कि श्रमिक पुरुषों तथा महिलाओं के स्वास्थ्य व शक्ति तथा बालिकाओं की सुकुमार अवस्था का दुरूपयोग नहीं हो एवं आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर उन्हें ऐसे रोजगार में न जान पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के प्रतिकूल हो।

अनुच्छेद 42 के अन्तर्गत राज्य से काम की न्याय संगत और मानवोचित दशाएं सुनिश्चित करने के अतिरिक्त महिलाओं के लिए प्रसूति काल में प्रभावी उपबंध करने की अपेक्षा की गई।(राजकुमार,2002,पृ010.11)

इनके अतिरिक्त 73वें व 74वें संवैधानिक संशोधन द्वारा स्थानीय शासन में महिला प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित किया जाना भी महिलाओं को विशेष संरक्षण प्रदान करने की ही एक कोशिश है। जिसमें महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिया गया था जो कि 7 सितम्बर, 2013 से 50 प्रतिशत कर दिया गया। (Retrived from Rajasthanloweyers.blogpost.com)

इस प्रकार विभिन्न संवैधानिक व्यवस्थाओं के द्वारा महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार प्रदान करने के साथ–साथ कुछ विशेष संरक्षण भी प्रदान किया गया है। इनके अतिरिक्त महिलाओं के लिए समय समय पर अनेक विधिक प्रावधान भी किये गये है।

भारत में महिलाओं के वैधानिक अधिकार

समाज में महिलाओं की निम्न स्थिति को ध्यान में रखते हुये एवं संविधान प्रदत्त मूल अधिकारों व नीति निर्देशक तत्वों को व्यवहारिक बनाने के लिये समय– समय पर कुछ सामाजिक विधि–विधानों की भी सृष्टि की गई। यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व भी कुछ विधान महिलाओं की प्रस्थिति के संदर्भ में महत्वपूर्ण थे। जैसे–बंगाल सती अधिनियम– 1829, भारतीय दण्ड संहिता–1860, धर्म परिवर्तन विवाह समापन अधिनियम 1869, तलाक अधिनियम 1869, विवाहित महिला का सम्पत्ति अधिनियम 1874, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1925, बाल विवाह प्रतिबंध अधिनियम 1929 तथा हिन्दू द्विविवाह अपराध निवारण अधिनियम, 1946 इत्यादि। प्रस्तावना के साथ–साथ संविधान के भाग 3 जो मूल अधिकारों से संबंधित है, के अनुच्छेद 14, 15, 16, और राज्य के नीति निदेशक विद्धान्तों में भी महिलाओं को विशेष स्थिति प्रदान की गई है।(कौशिक,2004,पृ0191)

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी महिला अधिकारों को संरक्षण प्रदान करने के लिये बहुत से अधिनियम पारित किये गये जैसे–हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955, दहेज निरोधक अधिनियम 1961, समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, स्त्रियों व कन्याओं का अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम 1956, गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971, महिला अशिष्ट निरूपण निषेध अधिनियम 1986, प्रसवपूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994, धरेलू हिंसा अधिनियम 2005, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न अधिनियम 2013 इत्यादि।

इस प्रकार उपरोक्त कानून हिन्दू विवाहित महिलाओं सहित सभी महिलाओं के लिए समान रूप से लागू है। इसके अतिरिक्त हिन्दू विवाहित महिलाओं के अधिकारों को हम हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 के अंतर्गत किये गए प्रावधानों के अध्ययन द्वारा भी स्पष्ट कर सकते है। अतः हिन्दू विवाह अधिनियम में महिला अधिकार एवं प्रस्थिति हेतु उसका विवेचन इस प्रकार किया गया है–

हिन्दू विवाह अधिनियम 1955

इस अधिनियम में छः अध्याय है। इनमें विस्तार से हिन्दू विवाह कानूनों को स्पष्ट किया गया है। प्रथम अध्याय में इस अधिनियम के लागू होने का क्षेत्र, हिन्दू की परिभाषा एवं प्रभाव को स्पष्ट किया गया है। द्वितीय अध्याय में हिन्दू विवाह की शर्तें बताई गई है। हिन्दू विवाह की शर्ते है–

(i) दोनों पक्षकारों में से किसी का पति या पत्नी विवाह के समय जीवित नहीं हो।

(ii) विवाह[1] के समय दोनों पक्षकारों में से कोई पक्षकार–

क. चित्त विकृति के परिणामस्वरूप विधि मान्य सम्मति देने में असमर्थ न हो; या

ख. विधि मान्य सम्मति देने में समर्थ होने पर भी इस प्रकार के मानसिक रोग से ग्रस्त न हो कि वह विवाह और सन्तानोत्पत्ति के अयोग्य हो; या

ग. उसे उन्मत्ता का दौरा बार–बार पड़ता है।

(iii) वर ने 21 वर्ष की आयु और वधु ने 18 वर्ष विवाह के समय पूरी कर ली है;

(iv) जबकि उन दोनों मे से प्रत्येक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा से उन दोनों के बीच विवाह अनुज्ञात न हो पक्षकार प्रतिषिद्ध नातेदारी की डिग्रियों के भीतर नहीं है;

(v) जब तक कि उनमें से प्रत्येक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा से उन दोनों के बीच विवाह अनुज्ञात न हो पक्षकार एक–दूसरे के सपिण्ड नहीं है।

हिन्दू विवाह के लिए संस्कार

1. हिन्दू विवाह उसके पक्षकारों में से किसी के रूढिगत आचारों और संस्कारों के अनुरूप अनुष्ठित किया जाता है।

2.जहां ऐसे आचार व संस्कारों के अन्तर्गत सप्तपदी है। वहां विवाह पूरा बाध्य कर तब हो जाता है जबकि सातवां पद पूरा किया जाता है।

हिन्दू विवाह का रजिस्ट्रीकरण

1हिन्दू विवाह अधिनियम के द्वारा राज्य सरकार विवाह को सफल बनाने के लिए उसके रजिस्टर में दी गई रीति व शर्तों के अधीन रहकर जैसी कि विहित की जायें, प्रविष्ट कर सकेंगे।

2.यदि राज्य सरकार की यह राय है कि ऐसा करना आवश्यक है तो यह उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुये भी यह उपबन्ध कर सकेगी कि उपधारा (1) में निर्दिष्ट विशिष्टियों को प्रविष्ट करना उस राज्य में या उसके किसी भाग में या तो सब

अवस्थाओं में या ऐसी अवस्थाओं में जैसी की उल्लिखित की जायें, अनिवार्य होगा और जहाँ कि ऐसा कोई निर्देश निकाला गया है, वहाँ निमित्त बनाये गये किसी नियम का उल्लंघन करने वाले को 25 रूपये तक जुर्माना देना होगा।

3.इस धारा के अधीन बनाये गये सब नियम राज्य विधान मण्डल के समक्ष रखे जायेंगे।

4.हिन्दू विवाह रजिस्टर सब युक्ति युक्त समयों पर निरीक्षण के लिये खुला रहेगा और उसमें अन्तर्विष्ट कथन साक्ष्य के रूप में ग्राह्य होंगे और रजिस्टर आवेदन किये जाने पर और अपने को विहित फीस की देनगियाँ किये जाने पर उसमें से प्रमाणित उद्धरण देगा।

5.इस धारा में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुये भी किसी हिन्दू विवाह की अन्यत्र ऐसी प्रविष्टि करने में कार्यलोप के कारण किसी अनुरीति में प्रभावित न होगी।

दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन

जबकि पति या पत्नी में से किसी ने युक्तियुक्त प्रति हेतु के बिना दूसरे से अपना साहचर्य प्रत्याहत कर लिया है, तब परिवेदित पक्षकार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिये आवेदन कर सकेगा तथा न्यायालय तदनुसार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिये आज्ञाप्ति देगा।

न्यायिक पृथक्करण

1. विवाह के पक्षकारों में से कोई पक्षकार चाहे वह विवाह इस अधिनियम के पूर्व हुआ हो चाहे पश्चात् जिला न्यायालय को धारा 13 की उपधारा (1) में और पत्नी की दशा में उसी उपधारा (2) के अधीन विनिर्दिष्ट आधारों में से किसी ऐसे आधार पर जिस पर विवाह–विच्छेद के लिए अर्जी उपस्थापित की जा सकती थी, न्यायिक पृथक्करण की डिक्री के लिये प्रार्थना करते हुये अर्जी उपस्थापित कर सकेगा।

2. जहाँ कि न्यायिक पृथक्करण के लिये आज्ञप्ति दे दी गई है।

शून्य विवाह इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् यदि कोई विवाह धारा 5 के खण्ड (1), (4) और (5) में उल्लेखित शर्तों में से किसी एक का उल्लंघन करता है तो वह अकृत और शून्य होगा और उसमें के किसी भी पक्षकार के विरूद्ध पेश की गई याचिका पर अकृत्ता की आज्ञप्ति द्वारा घोषित किया जा सकेगा।

शून्यकरणीय विवाह

1. कोई विवाह भले ही वह इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व या पश्चात् अनुष्ठित किया गया है; निम्न आधारों में से किसी पर अर्थात्

(क) कि प्रत्यर्थी की नपुंसकता के कारण विवाहोत्तर संभोग नहीं हुआ है।

(ख) इस आधार पर कि विवाह धारा 5 के खण्ड (2) में उल्लिखित शर्तो के उल्लंघन में है, या

(ग) इस आधार पर कि याचिकादाता की सम्पत्ति या जहां कि याचिकादाता के विवाहार्थ संरक्षक की (धारा 5 के अनुसार बाल विवाह निरोधक अधिनियम, 1978 के लागू होने के पूर्व थी) सम्पत्ति कपट या छल से प्राप्त की थी, या

(घ) इस आधार पर प्रत्युत्तरदात्री विवाह के समय याचिकादाता से भिन्न किसी व्यक्ति द्वारा गर्भवती थी; शून्यकरणीय होगा और अकृत्ता की आज्ञप्ति द्वारा अकृत किया जा सकेगा।

2. विवाह को अकृत करने के आधारों का उल्लेख किया गया है।

तलाक

1. तलाक पति या पत्नी पेश की गई याचिका पर एक आधार पर हो सकता है कि–

(i) विवाह के अनुष्ठान के पश्चात् अपनी पत्नी या अपने पति से भिन्न किसी व्यक्ति के साथ स्वेच्छया मैथुन किया है; या

(क) विवाह के अनुष्ठान के पश्चात् अर्जीदार के साथ क्रूरता का बर्ताव किया है; या

(ख) अर्जी के उपस्थापन के ठीक पहले कम से कम दो वर्ष की कालवधि तक अर्जीदार को अभिव्यक्त रखा है; या

(ii) दूसरा पक्षकार दूसरे धर्म को ग्रहण करने से हिन्दू नहीं रहा हो; या

(iii) दूसरा पक्षकार इस हद तक मानसिक विकार से पीडित रहा है कि अर्जीदार से युक्तियुक्त रूप से आशा नहीं की जा सकती है कि वह प्रत्यर्थी के साथ रहे।[3]

(iv) दूसरा पक्षकार कुष्ठ रोग से पीड़ित हो; या

(v) दूसरा पक्षकार यौन–रोग से पीड़ित हो; या

(vi) दूसरा पक्षकार संसार का परित्याग कर चुका हो; या

(vii) दूसरे पक्षकार के बारे में सात वर्ष या अधिक कालवधि में उन लोगों के द्वारा जिन्होंने दूसरे पक्षकार के बारे में यदि वह जीवित होता तो स्वभावतः सुना होता, नहीं सुना गया है कि जीवित है।

पत्नी तलाक की आज्ञाप्ति द्वारा अपने विवाह–भंग के लिये याचिका

(i) इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व यदि पति की विवाह से पूर्व पत्नी है या पति के याचिककादात्री के विवाह से पूर्व पत्नी है जो कि विवाह के समय जीवित थी या

(ii) पति विवाह के अनुष्ठान के दिन से बलात्कार, गुदा मैथुन या पशुगमन का दोषी हुआ है; या

(iii) कि हिन्दू दत्तक ग्रहण और भरण–पोषण अधिनियम, 1956 की धारा 18 के अधीन वाद में या दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973, की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में यथास्थिति, डिक्री या आदेश, पति के विरूद्ध पत्नी को भरण–पोषण देने के लिये इस बात के होते हुये भी पारित किया गया है कि वह अलग रहती थी और ऐसी डिक्री या आदेश के पारित किये जाने के समय से पक्षकारों में एक वर्ष या उससे अधिक के समय तक सहवास का पुनरारम्भ नहीं हुआ है; या

(iv) विवाह के बाद पन्द्रह वर्ष से पूर्व तथा 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के पहले विवाह का निराकरण कर दिया है।

13(क) विवाह विच्छेद कार्यवाहियों में प्रत्यर्थी को वैकल्पिक अनुतोष धारा 13 की उपधारा (1) के खण्ड ;पपद्धए ;अपद्ध और ;अपपद्ध में वर्णित आधारों पर यदि न्यायोचित हो तो न्यायिक पृथक्करण के लिये डिक्री पारित कर सकता है।

पारस्परिक सम्मति से विवाह–विच्छेद

1. दोनों पक्षकार यदि एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग–अलग रह रहे हैं और वे एक साथ नहीं रह सके हैं तथा वे इस बात के लिये परस्पर सहमत हो गये हैं कि विवाह विघटित कर देना चाहिये।

2. उपधारा (1) के तहत अर्जी की तारीख से 6 महीने के बाद और 18 माह के भीतर यदि अर्जी वापस नहीं ली जाती है न्यायालय द्वारा जांच के बाद न्यायालय विवाह विघटित की डिक्री पारित कर देगा।

विवाह के तीन वर्ष के अन्दर तलाक के लिये कोई याचिका

1. विवाह के एक वर्ष न होने तक न्यायालय याचिका ग्रहण नहीं करेगा लेकिन यदि याचिका दाता का असाधारण कष्ट या असाधारण दुराचारिता के मामले में एक वर्ष से पहले[4] विवाह के भंग की अर्जी की आज्ञा दे सकता है, लेकिन यदि न्यायालय को सुनवाई के समय प्रतीत हो कि याचिका पेश करने की इजाजत मिथ्या तथ्यों पर आधारित थी तो न्यायालय आज्ञप्ति विवाह के एक वर्ष अवसान न होने तक प्रभावशील नहीं होगी।

2. विवाह एक वर्ष से पूर्व तलाक के लिये याचिका पेश करने की इजाजत के लिये न्यायालय उस विवाह से हुई संतान के हितों तथा दोनों पक्षकारों में एक वर्ष के अवसान से पूर्व मेल मिलाप की संभावना है या नहीं ध्यान रखेगा।

कब तलाक–प्राप्त व्यक्ति पुनः विवाह कर सकेंगे

यदि विवाह तलाक की आज्ञप्ति द्वारा भंग कर दिया गया है और आज्ञप्ति के खिलाफ अपील खारिज कर दी गई है तो विवाह के किसी पक्षकार के लिये फिर विवाह करना विधिपूर्ण होगा।

शून्य और शून्यकरणीय विवाहों के अप्रत्यों की धर्मजता

विवाह धारा 11 के अधीन कोई विवाह अकृत और शून्य है ऐसे विवाह का कोई अपत्य जो विवाह के विधिमान्य होने की दशा में धर्मज होता, या होगा, चाहे ऐसे अपत्य का जन्म विवाह विधि (संशोधन) अधिनियम 1976 के प्रारंभ से पूर्व या पश्चात् और चाहे विवाह के संबन्ध में अकृतता की डिक्री इस अधिनियम के अधीन अर्जी से भिन्न आधार पर शून्य अभिनिर्धारित की गयी हो या नहीं।

उपधारा (1) या उपधारा (2) के द्वारा किसी विवाह के अकृत या शून्य है या धारा 12 के अधीन अकृत्त घोषित किया है, तो उस अपत्य को अपने माता–पिता से भिन्न किसी व्यक्ति की सम्पत्ति का अधिकार ऐसी दशाा में प्राप्त होगा जब यह अधिनियम पारित नहीं किया गया होता तो वह अपत्य अपने माता पिता का अधर्मज अपत्य न होने के कारण ऐसा कोई अधिकार नहीं रखता।

यदि अधिनियम के प्रारंभ के बाद दो हिन्दूओं के विवाह के समय पक्षकार का पति या पत्नी जीवित था या थी तो ऐसा कोई विवाह शून्य माना जायेगा और भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 494 और 495 के उपबन्ध तदनुकूल लागू होंगे।

हिन्दू विवाह के लिए कुछ अन्य शर्तों का उल्लंघन के लिए दण्ड

प्रत्येक व्यक्ति जो कि धारा 5 के खण्ड (iii), (iv), (v) में उल्लिखित शर्तों के उल्लंघन करता है तो दण्ड की प्रक्रिया–

(क) धारा 5 के खण्ड (iii), उल्लंघन पर 15 दिन का कारावास या जुर्माने या दोनों हो सकता है।

(ख) धारा 5 के खण्ड (iv), या खण्ड (5) में उल्लिखित शर्तो के उल्लंघन पर 2महीने का कारावास या जुर्माना, जो कि एक हजार रूपये तक हो सकेगा

वाद कालीन भरण–पोषण और कार्यवाहियों के व्यय

कार्यवाही व्यय के लिए पत्नी या पति की स्वतंत्र पर्याप्त आय नहीं है तो पति या पत्नी के आवेदन पर प्रत्युत्तरदात्री को कार्यवाही में लगने वाले व्यय देने का आदेश दे सकता है। यह प्रत्युत्तरदात्री को कार्यवाही में लगने वाले व्यय देने का आदेश दे

सकता है। यह प्रत्युत्तरदात्रा या प्रत्युत्तरदात्री की आय को ध्यान में रखकर प्रति मास के लिए तय की जाती है।

स्थायी निर्वाह–व्यय और भरण–पोषण

पति या पत्नी के आवेदन पर प्रत्युत्तरदात्रा या प्रत्युत्तरदात्री अपनी आय के आधार पर आवेदक या आवेदिका को आजीवन या मासिक आय के रूप में स्थायी निर्वाह व्यय देगा।

सन्तति की अभिरक्षा

इस अधिनियम के अधीन वाली किसी कार्यवाही में न्यायालय अवयस्क सन्तति की अभिरक्षा, भरण–पोषण और शिक्षा के बारे में जहां संभव हो वहां उनकी इच्छा से संगत समय–समय पर आदेश दे सकता है।

सम्पत्ति का व्ययन

न्यायालय विवाह में या विवाह के समय के आस पास भेंट की गई सम्पत्ति के बारे में जो कि पति और पत्नी दोनों की संयुक्तः है, ऐसे उपबन्ध आज्ञप्ति में कर सकेगा जैसे कि वह न्याय और उचित समझे।

डिक्रियों और आदेश की अपीलें

न्यायालय द्वारा दी गई सभी डिक्रियां उपधारा 3 के उपबन्धों के अधीन रहेगी तथा धारा 25 या धारा 26 के अधीन होने वाली किसी कार्यवाही में न्यायालय द्वारा किये गये आदेश उपधारा 3 के उपबन्धों के अधीन रहते हुये तब अपीलीय होंगे, जबकि वे अन्तरिम आदेशों के न हों। ऐसी अपील उस न्यायालय में होगी जहां आरम्भिक सिविल अधिकारित के विनिश्चयों की अपीले होती हे। यह अपील खर्चे से संबंधित नहीं हो हर अपील 90 दिनों के अंदर की जायेगी।

डिक्रियों और आदेशों का प्रवर्तन

सभी डिक्रियाँ और आदेश उसी रीति से प्रवर्तित होगे जिसमें उस न्यायालय द्वारा अपनी तत्समय आरम्भिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में दी गई डिक्रियाँ और आदेश प्रवर्तित किये जाते हैं।

इस प्रकार उपरोक्त विवेचन हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 द्वारा हिन्दू विवाहित महिलाओं में अधिकारों से संबंधित है। यद्यपि इसमें तलाक की व्यवस्था भी दी गई है जबकि हिन्दू धर्म के अनुसार विवाह को सात जन्मों का संबंध माना जाता है। किन्तु विधान में तलाक की व्यवस्था होने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि शासन व्यवस्था द्वारा किसी तरह की गलत व्यवस्था की गई है। वरन् महिला –पुरुष दोनों के सुखद जीवन एवं अधिकारों के संरक्षण हेतु ही यह व्यवस्था है। अर्थात् जब पति–पत्नी का साथ रहना असंभव हो जाए तो उन्हें एक साथ रखना अनुचित होगा। इससे लाभ नहीं वरन् नुकसान ही अधिक होगा। इसमें भी न्यायालय द्वारा उचित व्यवस्था की जाती है ताकि सुलह के आधार पर तथा न्यायिक पृथक्करण द्वारा एक वर्ष का समय प्रदान किया जाता है, फिर भी यदि उनमें पुनः सम्बन्ध स्थापित हो जाए तो तलाक नहीं किया जाता। साथ ही पुनर्विवाह का प्रावधान भी है अर्थात् महिलाओं के अधिकारों का इस कानून में भी संरक्षण किया गया है।

इस प्रकार उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारत में संवैधानिक एवं वैधानिक आधार पर महिला मानवाधिकारों के संरक्षण की सुदृढ व्यवस्था है। संवैधानिक स्तर पर भारतीय महिला को न केवल पुरूषों के समान सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक अधिकार प्रदान किए गए है वरन् संसद द्वारा पारित विधियों द्वारा महिलाओं के अधिकारों को विशिष्ट रूप से संरक्षित करने का प्रयास किया गया है। जिससे महिला मानवाधिकारों के प्रति संवैधानिक एवं वैधानिक संरक्षण एवं प्रतिबद्धता स्पष्ट होती है।

टिप्पणी

1.धारा 5 का खण्ड (ii) विवाह विधि संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापित।

2.विवाह संशोधन अधिनियम, 1999 (अधिनियम संख्या 39 वर्ष, 1999 दिनांक 29.12.99 से प्रभावी) की धारा 2 के द्वारा शब्द ''मिरगी'' को हटा दिया गया है।

3.विवाह विधि (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापित

4.विवाह विधि (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापितधारा

5.अधिनियम संख्या 50 वर्ष 2003 (दिनांक 23–12–2003 से प्रभावी) द्वारा प्रतिस्थापित

सन्दर्भ

दुबे एण्ड द्विवेदी,(2012): *प्राचीन हिन्दू विधि*, वाराणसी, कला प्रकाशन

राजकुमार (2002), *इनसाइक्लोपीडिया ऑफ वीमन एण्ड डवलपमेंट सीरीजः वीमन एण्ड नेशन*, नई दिल्ली, अनमोल पब्लिकेशन्स,

Rajasthanlowyer.blogspot.com/2009/09/blog-post.15.htm1 Accessedon 29/11/13

कौशिक, आशा,(2004) : *मानवाधिकार और राज्य :बदलते संदर्भ, उभरते आयाम*, जयपुर, पोइन्टर पब्लिशर्स,

http://gpsingh.Jagranjunction.com/2011/11/27/ महिला अधिकार और मीडिया Accessedon 20/12/15